P: ISSN NO.: 2321-290X RNI : UPBIL/2013/55327 VOL-5* ISSUE-11* (Supplementary Issue) July- 2018
E: ISSN NO.: 2349-980X **Shrinkhla Ek Shodhparak Vaicharik Patrika**

स्थान–वाची नामों के उत्तरपदों का विश्लेषण (दौसा जिले के विशेष संदर्भ में)

अशोक कुमार मीणा
सह आचार्य,
हिन्दी विभाग,
गौरीदेवी राजकीय महिला महाविद्यालय,
अलवर

सारांश

स्थानवाची नामों विष्लेषण का कार्य नीरस और कठिन परिश्रम का है पर जो इसमें डूबता है, वह बहुत कुछ पा जाता है। जो लोग कहते हैं नाम में धरा क्या है वे भूल जाते हैं नाम ही तो रूप का प्रत्यापक है, नाम ही रूप का प्रकाषक है, नाम–रूप मिलकर षिव तत्व बना है, नाम रूप का व्याकरण ही परमार्थ चिंतन है । नाम यों ही नहीं रखा जाता, उसके पीछे व्यष्टि और समष्टि की चेतना, जातीय चेतना की पहचान, उसके जीवंत क्षेत्र के नामों के विष्लेषण द्वारा ही सम्पन्न होती है।

मुख्य शब्द : गढ़– किला, खेट– छोटा गाँव, कृषकों का गाँव, कलाँ (फा.)– ज्येष्ठ, बड़ा, खुर्द (फा.)– छोटा, घाटी– दो पहाड़ों के बीच की नीची जमीन।

प्रस्तावना

नाम के बिना वस्तु का अस्तित्व नहीं रह सकता। विष्व का प्रत्येक कण किसी न किसी नाम से विभूषित है। नाम के बिना रूप का बोध नहीं हो सकता। नाम निराकार को साकार तथा रूप को सार्थ क करता है। तुलसीदास ने रूप और नाम का अभिन्न सम्बन्ध को बतलाते हुए लिखा है–

'' देखिअहिं रूप नाम आधीना। रूप ज्ञान नहीं नाम विहीना।
रूप विषेष नाम बिनु जाने। करतलगत न परहिं पहचाने।।''[1]

रूप ईष्वर प्रदत्त है तो नाम मनुष्य प्रदत्त। नाम संबोधन की एक विधा है और इस विधा द्वारा ही हम सामान्य से विषिष्ट की ओर जाते हैं। नाम एक विषिष्टीकरण है। नाम के अभाव में हमारे सामाजिक व्यवहार रूक जायें और हमारा अस्तित्व ही जन–समुदाय में विलीन हो जाये। नाम के द्वारा ही हम व्यक्ति विषेष को समुदाय से पृथक् करते हैं। दूसरे शब्दों में ''नाम वह सांकेतिक एवं सार्थक शब्द–समूह है जिससे किसी सत्ता का परिचयात्मक बोध होता है।''[2]

अध्ययन का उद्देश्य

नाम विज्ञान में भी स्थान–नामों का अध्ययन विशेष महत्व रखता है । स्थान–नामों के अध्ययन से क्षेत्रीय संस्कृति, भाषागत विशेषताओं, भाषाओं के सीमा–निर्धारण, भाषा भौगोलिक वितरण, भाषा विकास की दिशाओं, भाषा का कालक्रम आदि से संबंधित महत्वपूर्ण सूचनायें प्राप्त होती हैं । अतः इस प्रकार का अध्ययन हम जितनी जागरूक एवं अद्यतन दृष्टि से करते हैं उतना ही ज्ञान के क्षेत्र का विस्तार और विकास होता है ।

ख्यातनाम संस्कृतज्ञ पाणिनि भी स्थान–नामों के अध्ययन को भाषा विज्ञान का अभिन्न अंग मानते हैं । प्रसिद्ध भाषा विज्ञानी जो.वान्द्रियैज स्थान–नामों को प्रागैतिहासिक तथ्यों का विश्वसनीय सूत्र मानते हैं । स्थान–नामों की जीवन्त शब्दावली सामाजिक विकास क्रम को आदिकाल से शब्द, अर्थ और ध्वनि के धरातल पर सुरक्षित रखे हुए हैं । वस्तुतः स्थान–नामों का कारणपरक अध्ययन मनोरंजक होने के साथ–साथ क्षेत्र विशेष के उस इतिहास को उजागर करता है जो भूत गर्त में छुपा है । इसी तरह स्थानीय नामों के सामाजिक, आर्थिक, धार्मिक, ऐतिहासिक आदि अनेकानेक कारण हो सकते हैं ।

नाम की व्युत्पत्ति इस प्रकार की गयी है ''म्नायते अभ्यते नम्यते अभिधीयते अर्थोऽनेनवा' – अर्थात् जिससे अर्थ का ग्रहण अथवा बोध होता है उसे नाम कहते हैं। 'न्मा' धातु अभ्यास या आवृत्ति करने के अर्थ में प्रयुक्त होती है। जो शब्द किसी एक को पुकारने के अर्थ में मनुष्यों द्वारा बार–बार दुहराया जाता है, इसी आवृत्यर्थक शब्द को नाम को नाम कहते हैं। अमरकोष में नाम को आव्हव, आख्या, आव्हा, अभिधान, नामधेय, नाम से पुकारा गया है।[3]

व्याकरण का संबंध भाषा से है और भाषा का संबंध स्थान–नामों से । प्रत्येक भाषा में शब्दों के मुख्यतः दो भाग होते हैं, नाम और आख्यात। आख्यात का सम्बन्ध धातुओं से है। जिनका संग्रह पाणिनि ने धातुपाठ की १६४४ धातुओं के रूप में किया है। नाम अथात् संज्ञाएँ तीन प्रकार की होती हैं– (१) वस्तुओं के नाम, (२) मनुष्य नाम, (३) स्थान नाम। मनुष्य जो भाषा बोलते हैं उसी भाषा के शब्दों से अपने बच्चों के नाम रखते हैं और देष के भिन्न–भिन्न स्थानों का नामकरण करते हैं। स्थान नामों का अध्ययन भाषाषास्त्र का अभिन्न अंग है। स्थान–नामों की उत्पत्ति में अनेक राजनीतिक, सामाजिक और वैयक्तिक कारण होते हैं। यथा– पांचाल क्षत्रिय जिस भूप्रदेष में पहिले– पहिल बसे उस प्रदेष का नाम पांचाल पड़ गया।[4]

नगर, ग्रामों के अनेक नाम जो मुख्यतः चार कारणों से बनते हैं और जिनका निर्देष पाणिनि ने अपनी अष्टाध्यायी में ४।२।६७ से ४।२।७० तक सूत्रों में किया है–

(अ) 'तदस्मिन्नस्तीति देषे तन्नाम्नि' (४।२।६७), अर्थात् अमुक वस्तु जिस स्थान में होती है उस वस्तु के नाम से उस स्थान का नाम पड़ जाता है, जैसे– 'उदूबराः सन्ति अस्मिनदेषे औदूम्बराः', आर्थात् उदूंबर वृक्ष जहाँ हों वह स्थान औदूम्बर कहलाया।

(आ) 'तेन निवृत्तम्' (४।२।६८), आर्थात् उसने यह स्थान बसाया । बसाने वाले के नाम से शहर या गाँव का नाम रखना एक स्वाभाविक और पुरानी प्रथा है।जयसिंह का बसाया हुआ जयपुर कहलाया।

(इ) 'तस्य निवासः' (४।२।६९), अर्थात् रहने वालों के नाम से स्थान का नाम; षिवि जाति के क्षत्रिय जहाँ रहे वह प्रदेष शैव कहलाया।

(ई) 'अदूरभवश्च' (४।२।७0), जो स्थान किसी दूसरे स्थान के निकट बसा हुआ होता है, वह भी उसके नाम से पुकारा जाता है; जैसे वरणा वृक्ष के समीप जो ग्राम बसा हो उसका नाम भी वरणा होगा। अथवा विदिषा नदी के समीप बसा नगर वैदिष हुआ।''[5]

दौसा जिले के दो पद वाले स्थान–वाची नामों में पूर्वपद के आषय को स्पष्ट करने के लिए उत्तर पदों का योग है। डॉ. कामिनी के अनुसार पुर्व पद तब तक स्थन–वाची नाम का अर्थ नहीं देता , जब तक उसके साथ 'उत्तर' पद जुड़ करके आषय को स्पष्ट करने में सहयोग नहीं देता।''[6] केहरी सिंह पुरा दो पद वाले स्थान–वाची नाम में पहला पद केहरीसिंह जब तक स्थान का बोध नहीं देता, तब तक उसके साथ उत्तरपद 'पुरा' नहीं जुड़ जाता। पुरा के जुड़ने के बाद ही 'केहरीसिंहपुरा' स्थान– वाची नाम बन जाता है।

अर्थ की दृष्टि से भी परपदों का विभाजन निम्न प्रकार से किया जा सकता है।

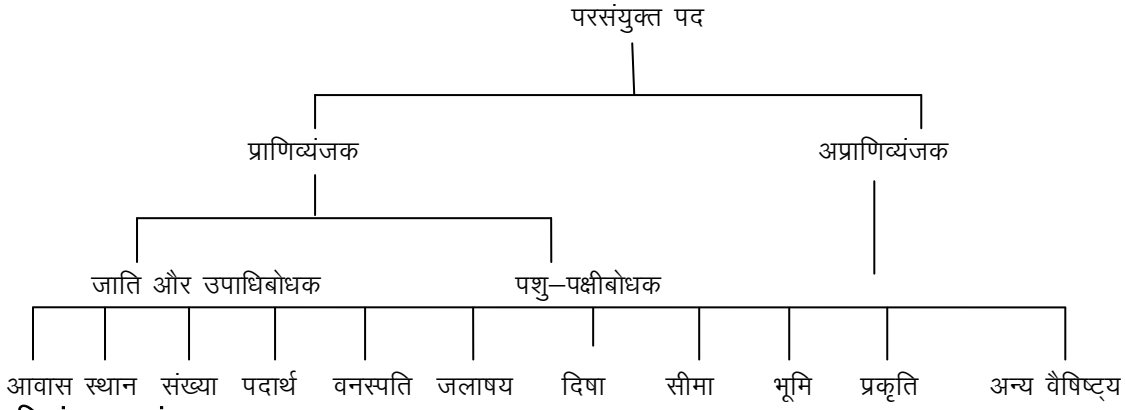

प्राणिव्यंजक परसंयुक्तपद

प्राणिव्यंजक परपदों में सर्वप्रथम यहाँ जाति और उपाधिबोधक परपदों का उल्लेख किया जा रहा है। जैसे–

गूजर (सं. गुर्जर)''[7]

यह एक क्षत्रिय जाति है जो पहले गुर्ज से लड़ने में सिद्धहस्त होने के कारण गुर्जर कहलायी। 7वीं शताब्दी में इनका राज्य पंजाब, राजपूताना व गुजरात के काफी शग पर था। 11वीं शताब्दी में इनका राज्य अलवर पर शी था। तब इनकी राजधानी राजोरगढ़ थी। राजपूताना के राजकुमारों को दूध पिलाने के लिए गुर्जर महिला को धाय (पन्नाधाय का नाम उल्लेखनीय है) रखा जाता था। इनका मुख्य व्यवसाय खेती करना व पशुपालन करना है।''[8] गूजर जाति बोधक परपद निम्नलिखित स्थान–नामों पर प्रयुक्त हुआ है–

रायपुरा गुर्जर – सिकराय

औण्ड़ गुर्जर–महवा

ब्राह्मण

हिन्दुओं में ब्राह्मण जाति की उच्चता एवं श्रेष्ठता अन्य जातियों की अपेक्षा उनकी बौद्धिक उत्कृष्टता और एक हिन्दू के जीवन में उनके प्रति जो आदर की भावना है, उसको देखते उसका सर्वोच्च स्थान है। ब्राह्मण जाति हिन्दुओं के लिए बहुत ही महत्वपूर्ण है। हिन्दुओं का कोई भी शुभ या अषुभ कार्य इनके दिषा–निर्देष के बिना नहीं होता। वेद पढ़ना, यज्ञ करना–कराना, दान लेना–देना इनका कर्म रहा है। परन्तु आज तो जाति में परिवर्तन के परिणामस्वरूप व्यवसाय शी परम्परागत नहीं रहे। नतीजा यह हुआ कि ब्राह्मण शी विभिन्न धन्धे करने लगे हैं। दौसा क्षेत्र में ब्राह्मण अधिकतर पूजा–पाठ का कार्य करते हैं। ब्राह्मण जाति बोधक परपद निम्नलिखित स्थान–नामों पर प्रयुक्त हुआ है–

रायपुरा ब्राह्मणान– सिकराय

औण्ड़ ब्राह्मण– महवा

मीणा

इस शब्द की व्युत्पत्ति 'मत्स्य' से मीन और मीन से मीणा के रूप में हुई है। मान्यता है कि मीणों की उत्पत्ति मत्स्य के उदर से हुई है। इस कारण इनका नाम मीन पड़ा जो बदलते–बदलते वर्तमान रूप तक आ पहुँचा है।''[8] मीणा जाति में भी विभाजन देखा जा सकता है ''जो आक्रोषी थे वे चौकीदार मीणे या शासक और जो अधीनता स्वीकार कर खेतीबाड़ी करने लगे वे जमींदार मीणे या कृषक कहलाए।''[9] मीणा जाति बोधक परपद निम्नलिखित स्थान–नामों पर प्रयुक्त हुआ है–

टोडा मीणा– रामगढ़
औण्ड़ मीणा– महवा

भंगी (सं. हरिजन)

श्ंगी को हरिजन, मेहतर, चूड़ा शी कहते हैं। अछूतों के लिए 'हरिजन' शब्द का प्रयोग गाँधीजी ने प्रारम्भ किया। संस्कृत में 'हरिजन' शब्द का अर्थ है– 'ईष्वर का श्क्त'। हिन्दी शब्द सागर में 'हरिजन' शब्द का अर्थ 'ईष्वर का श्क्त' ही दिया है।''[10] इनकी उत्पत्ति के बारे में कहा जाता है कि ब्रह्मा जी ने जमीन पर कूड़ा–कचरा पड़ा देखकर उसको झाड़ने के वास्ते अपने मैल से एक पुरूष पैदा किया। उसका नाम मात्रक रखा जिसका कार्य कूड़ा–कचरा उठाकर फेंकना था। उसकी पदवी महिथर हो गयी फिर महिथर का मेहतर बन गया। श्ंगी जाति हिन्दू धर्म की सबसे निम्न मानी जाती है। सभी इनको अपवित्र मानते हैं। इनका मुख्य व्यवसाय पखाना उठाना है। इसके अलावा मरे हुए जानवरों को शहर के बाहर फैंकते हैं। इस समाज में लाल गुरू नाम का एक ज्ञानी पुरूष हुआ है जिसे ये लोग पीर मानते हैं। दौसा क्षेत्र में इनकी आबादी हर गाँव, षहर, कस्बे में मिल जाती है।''[11] हरिजन जाति बोधक परपद निम्नलिखित स्थान–नाम पर प्रयुक्त हुआ है–

ढाणी हरिजन–बसवा

मेव

मेवातियों का उद्गम करौली के राजा तहनपाल यादव (संवत् 1130) से माना जाता है तथा इनका शासक वर्ग खानज़ादा कहलाता है। मेव साधारण नागरिक हैं और अपने आपको मीणों से निकले मानते हैं। मेजर पाउलट ने भी मेवातियों को शासक और मेवों को शासित जाति माना है। प्रसिद्ध इतिहासज्ञ मोनियर विलियम्स ने लिखा है कि मेवात का नामकरण मेवों के नाम से ही हुआ है, जो अलवर जिले में भी है। ये लोग अपने आपको राजपूतों से से निकला मानते हैं, पर कुछ विषेषज्ञ इन्हें उन मीणों का एक वर्ग बताते हैं, जो मुसलमान बन गए थे।''[12] इतिहासकार जगदीषसिंह गहलोत इन्हें शक जातीय मानते हैं।''[13] मौलवी अबुमुहम्मद अब्दुल शकूर मेवाती कृत 'तारीख मेवात' में इनकी उत्पत्ति राजपूतों से मानी गई है। पर मेजर पाउलट ने इनमें राजपूती व मीणों का सम्मिश्रण माना है।''[14] गहलोत के अनुसार मेवों को सन् 1360 में मुसलमान बनाया गया। मुसलमान धर्म में दीक्षित करने वाले तीन व्यक्तियों– हजरत मीरान, हजरत सैयद सालार तथा ख्वाजा मुईनुद्दीन चिष्ती में सर्वप्रमुख काम हजरत सयैद सालार का है, क्योंकि सैयद सालार के झण्ड़े की मेव लोग पूजा भी करते हैं व इनके कई मेले भी लगते हैं। हजरत सैयद सालार महमूद गजनवी के साथ भारत आया था।''[15] फिरोज़ तुगलक के समय में भी खानजादों तथा अधिकांष मेवों को मुसलमान बनाये जाने की बात मानी जाती है, यद्यपि इस धर्म– परिवर्तन का जिक्र उसके इतिहास में स्पष्ट रूप से नहीं मिलता। पर ऐसी घटना अवष्य ही भयंकर मारकाट के बाद हुई होगी। फिरोज़ के जीवन चरित्र में इसकी झलक मिलती है। उसके अनुसार उसने तीन विभिन्न स्थानों पर मूर्तियों को तोड़ा, देव मंदिर ध्वस्त किए और मूर्ति–पूजकों को मौत के घाट उतारा। उसमें आगे लिखते हुए कहा गया है कि ''बहुत से विधर्मियों को इस्लाम कबूल करने पर विवष किया और 'जजिया' से माफी भी दी। इस खबर से बहुत से हिन्दू मुसलमान बनने आए और उन्हें मुसलमान बनाया गया। दिन पर दिन हर तरफ से लोग आने लगे और उन्हें मुसलमान बनाकर जजिया से मुक्त किया गया। तथा अन्य आदर और इनाम भी दिए गए।''[16] इसमें सन्देह नहीं यह जाति शनैः शनैः मुसलमान बनाई गई है। इनके रीति–रिवाज अभी तक हिन्दुओं से मिलते–जुलते हैं। ये गोत्र बचाकर संबंध करते हैं, होली, दीवाली आदि त्योहारों को मनाते हैं।''[17] मेव जाति बोधक परपद निम्नलिखित स्थान–नाम पर प्रयुक्त हुआ है–

नांगल मेव– महवा
खेहरा मुल्ला– महवा

चारण

ब्राह्मण और राजपूत जाति के गुणों का सामंजस्य हमें चारण जाति में मिलता है। कीर्ति का संचार करने वाले अर्थात् कीर्ति को फैलाने वालों को चारण नाम दिया गया है।''[18] यह जाति राजा, महाराजा, सरदारों की परम्परागत वंषावली की जानकारी रखते हैं। यह परम्परागत वंषबखान के साथ परामर्षदाता शी रहे हैं। चारण जाति बोधक परपद निम्नलिखित स्थान–नाम पर प्रयुक्त हुआ है–

नांगल चारण– महवा

उपाधिबोधक परपद

राणा उपाधिबोधक परपद निम्नलिखित स्थान पर प्रयुक्त हुआ है–

चांदराणा– दौसा

राव उपाधिबोधक परपद निम्नलिखित स्थान पर प्रयुक्त हुआ है–

खवारावजी– दौसा

पशु–पक्षीबोधक परपद

चिडी बोधक परपद निम्नलिखित स्थान पर प्रयुक्त हुआ है। जैसे–

तालचिडी– महवा

आवास बोधक पूर्वपद

आवास का कोषगत अर्थ रहने की जगह,मकान अथवा घर है।''[19] स्थान–नामों के बनने में आवास संबंधी उत्तरपदों का महत्वपूर्ण योगदान है। इन पदों का निर्माण उन आवासों से संबंधित है जो किसी राजा, ताल्लुकेदार, साधु–महात्मा विषेष वर्ग यथाः यात्री, पथिक आदि के रहने, रुकने और शरण लेने के लिए बनाये गये। सुविधा एवं सौन्दर्य की दृष्टि से लोग इनके आस–पास घर बनाते गये और कालान्तर में वे आवास केवल आवास न रहे

वरन् उन्होंने ग्राम, कस्बे या नगर का रूप ले लिया। धीरे–धीरे विकास क्रम में वे उत्तरपद बनकर स्थान–नामों की संरचना में अत्यधिक प्रभावपूर्ण हो गये हैं। दौसा क्षेत्र शी इसका अपवाद नहीं है। उसके आवास स्थानों में जिन आवास संबंधी उत्तरपदों का प्रयोग हुआ है। वे निम्न प्रकार हैं। जैसे–

कोठी

यह शब्द 'कोठा' से संबंधित है। इसका निकटतम संस्कृत शब्द 'कोष्ठिका' जिसका अर्थ 'घिरी हुई या बन्द हुई' होता है। प्राकृत में इसका समीपवर्ती पद 'कोठि्टया' है जो छोटे कोष्ठ के अर्थ में प्रयुक्त होता है। हिन्दी में यह कोठी शब्द 'कोठा' का स्त्रीलिंग होते हुए शी उससे व्यापक अर्थ रखता है।वस्तुतः इसे 'कोठा' का लघु रूप या 'ऊपर की छोटी मंजिल' होना चाहिए था पर लोक से मंजकर यह 'कोठा' से अधिक व्यापक अर्थ व्यक्त करने लगा। इससे बड़े और पक्के मकान, हवेली, बंगला के अर्थ का बोध होता है। पूर्वपद का आवरण देने से इससे व्यक्त होने वाले बड़े और पक्के मकान या हवेली के प्रमुख शग का द्योतन कराने की शवना सन्निहित है।''[20] यथा–

पटवारी की कोठी– बसवा

गढ़

'गढ़' संस्कृत शब्द है। गढ़ का अर्थ किला,कोट या खाई होता है। राजाओं के किले गढ़ ही कहलाते थे। कालान्तर में गढ़ नष्ट–भ्रष्ट हो गए। उन स्थानों पर बस्तियां बस जाने से गढ़ स्थानवाची पूर्वपद के रूप में प्रयुक्त होने लगे। दौसा क्षेत्र में गढ़ बोधक पूर्वपद निम्नलिखित 1 स्थान पर प्रयुक्त हुआ है। जैसे–

गीजगढ़–सिकराय

रामगढ़– महवा

खोह

यह पद गुफा, कंदरा के अर्थ में प्रयुक्त होता है। इसी से ही खोहरा, खोहरी बना है। खोह अधिकतर पहाड़ों, जंगलों में पायी जाती हैं लेकिन कालान्तर में इनके आस–पास बसावट हो जाने पर इन्हें उत्तरपद के रूप में प्रयुक्त कर स्थान–नाम की संरचना की जाने लगी। जैसे–

कालाखोह–सिकराय, दौसा

नाहरखोहरा– सिकराय

स्थानबोधक परपद

द्विपदीय स्थान–नामों में स्थानबोधक परपद सर्वाधिक संख्या में प्राप्त होते हैं। कतिपय स्थानबोधक परपद वहीं हैं जिनका पूर्वपद रूप में प्रयोग प्राप्त होता है। कतिपय पद ऐसे शी हैं जो केवल परपदीय प्रयोगों में ही आये हैं। स्थान सम्बन्धी समस्त परपदों का प्रयोग रूढ़ शब्दों के रूप में हुआ है, परन्तु सामासिक रचनाओं में परपदीय रूप प्रत्ययवत् प्रयोग में आये हैं। उदाहरणार्थ पुर, नगर आदि शब्दों का अर्थ बस्तियाँ हैं, परन्तु परपद रूप में यह अन्य शब्दों के साथ संयुक्त होकर अनेक स्थान–नामों की रचना करते हैं। स्थानबोधक परपद निम्न हैं–

पुर

यह संस्कृत शब्द है। इसका प्रयोग नगर ,षहर या कस्बा के लिए होता है। वेदों में इसका अर्थ 'नगर' है। वेदों में नगरों का वर्णन 'पुर' शब्द के आधार पर बहुत स्थानों में मिलता है।''[21] आचार्य पाणिनि ने शी इसे नगर के अर्थ में प्रयुक्त किया है।''[22] यह प्रयोग हिन्दी रचनाओं के अनुरूप है एवं हिन्दी व संस्कृत शब्दों के साथ प्रयुक्त हुआ है। परन्तु विदेषी शासकों द्वारा शी यह परपद अत्यधिक रचनाओं में अपनाया गया है। अतः पर्याप्त संख्या में विदेषी शब्दों में संयुक्त होकर संकर शब्दों की रचना की है। दौसा क्षेत्र में पुर बोधक परपद निम्नलिखित स्थानों पर प्रयुक्त हुआ है। जैसे–

मुरलीपुर–सिकराय

राजपुर– महवा

पुरा

यह 'पुर' का ही बहुप्रचलित रूप है। पुरा का प्रयोग पुर की शँति होता है,परन्तु 'पुर' बड़े स्थानों के नाम में संयुक्त होता है तथा छोटी–बस्तियों के स्थान–नाम में 'पुरा' प्रयोग हुआ है। पुरा बोधक परपद निम्नलिखित स्थानों पर प्रयुक्त हुआ है। जैसे–

राजपुरा– लालसोट

रतनपुरा– महवा

पुरी

पुर में 'ई' प्रत्यय लगने से 'पुरी' शब्द निष्पन्न होता है। इसका प्राचीन स्थान–नामों में शी प्रयोग हुआ है। दौसा क्षेत्र में पुरी बोधक परपद निम्नलिखित स्थानों पर प्रयुक्त हुए है। जैसे–

अक्षयपुरी– बसवा

खेमपुरी– रामगढ़

नगर

इसका अर्थ 'बस्ती' होता है। पूर्व वैदिक साहित्य में 'नगरिन्' व्यक्तिवाचक संज्ञा के विषेषण–रूप में आया है। तैत्तिरीय आरण्यक में यह शहर के रूप में आया है। ब्राह्मण ग्रथों में शी इसका उपर्युक्त अर्थ मिलता है।''[23] पाणिनि के समय में शी स्थान–नामों के अन्त में जुड़ने वाला यह महत्वपूर्ण उत्तरपद था। पाणिनि के अनुसार प्राच्य और उदीच्य दोनों शगों में नगर का प्रयोग होता था। इसका प्रमाण 'अमहन्नवं नगरेनुऽदीचां'(६/२/८६) सूत्र है।''[24] इस प्रकार परपद के रूप में नगर का स्थान अत्यधिक प्राचीन है जो वैदिक युग से लेकर आज तक अपने व्यापक प्रसार का परिचय दे रहा है। विदेषी आक्रान्ता शी जब इस देष में शासक हुए तो उन्होंने शी इसका खुलकर प्रयोग किया। नगरबोधक परपद निम्नलिखित हैं–

अमोलकनगर– महवा

नेर, नेरा, नेरी

इस पद का विकास सं. नगर झ प्रा. नयर झ अपभ्रंष णयर झ नेर हुआ है जो स्वयं 'नगर' का विकसित रूप है।''[25] अलवर क्षेत्र में नेर बोधक परपद निम्नलिखित 1 स्थान पर प्रयुक्त हुआ है। जैसे–

चक गनेर– रामगढ़

आभानेरी– बसवा

नंगला (नगला)

नंगला पूर्वपद का विकास संस्कृत 'नगर' से हुआ है जिसका अर्थ है गाँव या कस्बे से बड़ी मनुष्यों की बस्तियाँ जहाँ अनेक जातियों के मनुष्य रहते हों। नगर का

विकसित 'आ' प्रत्यय युक्त रूप नगरा अनेक स्थानों पर प्रयोग में आता है। नगला वास्तव में इसी नगरा का रूपान्तर है। नगला बस्ती के अर्थ में प्रयुक्त होता है परन्तु क्षेत्रीय बोली की प्रवृत्ति के आधार पर 'रा' ध्वनि 'ला' में परिवर्तित हो गयी है। इस प्रकार अलवर क्षेत्र में 'नगला' नगरा के स्थान पर प्रचलित हो गया। नंगला पूर्वपद रूप में व्यक्ति,जाति,स्थान तथा वैषिष्ट्य बोधक शेदक–पदों के साथ संयुक्त हुआ है।''[26] नंगला बोधक पूर्वपद निम्नलिखित स्थान–नाम पर प्रयुक्त हुआ है।जैसे–

कीर्ति नंगला–महवा

बास,वासी,वासना

ये तीनों रूप 'बास' शब्द से विकसित हुए हैं। इसी से संबंधित 'निवास' शब्द है जिसका अर्थ रहना होता है। किसी व्यक्ति, प्राणी या पदार्थ के रहने या होने वाले स्थान को लोक– प्रचलित ढंग से बास, वासी ,वासना कहा जाता है।''[27] यथा–

खानवास– लालसोट, लवाण

काल्यावास– रामगढ़ पचवारा

वाड़ा, वाड़ी

वाड़ा शब्द की व्युत्पत्ति संस्कृत 'बाट' से हुई है। चारों ओर घिरा हुआ खाली मैदान अथवा पशुषाला आदि को वाड़ा कहा जाता है।

वाड़ी संस्कृत 'वारी' का विकसित रूप है जो वाटिका के अर्थ में प्रयुक्त होता है। वाड़ा तथा वाड़ी में ध्वनि–साम्य है एवं दोनों शब्द वाटिका या बगीचे के अर्थ में प्रयुक्त होने लगे हैं, परन्तु वाड़ा स्वतंत्र रूप से 'घेरे' के अर्थ में शी प्रयुक्त होता है। धीरे–धीरे बाग या बगीचे से घिरी हुई शूमि बस्तियों के रूप में परिवर्तित होने लगी।''[28] अतः वाड़ा, वाड़ी स्थान–नामों में संयुक्त हो गये। जैसे–

जटवाडा– महवा गूजरवाडा– सिकराय

गांगदवाडी–बसवा

कूकरवाडी– बसवा

आबाद

यह फारसी शब्द है जो मनुष्यों की बस्ती के अर्थ में प्रयोग किया जाता है। परपद के रूप में इसका प्रयोग अपेक्षाकृत नवीन है और मुस्लिम शासन–काल से प्रारम्भ हुआ है।''[29] अन्य स्थानबोधक शब्दों की शँति आबाद का स्वतंत्र प्रयोग स्थान–नामों में प्राप्त नहीं होता तथा पूर्वपद के रूप में शी प्रयुक्त नहीं हुआ है। दौसा क्षेत्र के 4 स्थानों पर आबाद बोधक परपद प्रयुक्त हुआ है। जैसे–

अमराबाद–रामगढ़

चक सलेमाबाद– लालसोट

गाँव,गाँवा

संस्कृत ग्राम का हिन्दी रूपान्तर गाँव, गाँवा है। गाँव षब्द छोटी बस्ती, खेड़ा, खेतिहरों के घरों के लिए प्रयुक्त होता है। गाँव स्थानबोधक शब्द के रूप में रूढ़ शब्द है, परन्तु कुछ स्थानों में परपद रूप में प्रयुक्त हुआ है।''[30] यथा–

तलाबगाँव– लालसोट

बड़ागाँव– महवा, नांगल

रूँध

यह शब्द बड़े शूखण्ड के लिए प्रयुक्त होता है जिसमें सघन घास, पेड़–पौधे खड़े हों।''[31] रूंद परपद निम्न स्थान–नाम पर प्रयुक्त हुआ है। जैसे–

उकरूंद–महवा

खेडा

इसका विकास संस्कृत के 'खेट' शब्द से हुआ है जिसका अर्थ छोटा गांव, खेतिहरों का गाँव होता था। पाणिनि के अनुसार कुत्सित नगर 'खेट' कहे जाते थे। हिन्दी आदि शषाओं का खेड़ा इसी से निकला है।''[32] दौसा क्षेत्र में खेडा बोधक उत्तरपद निम्नलिखित स्थान–नामों पर प्रयुक्त हुआ है। जैसे–

मूडियाखेडा– सिकराय

ढाणी

छितराई बस्ती अथवा गाँव से थोडी दूरी पर बसने वाले एक परिवार के निवास स्थान को ढाणी कहा जाता है। ढाणी बोधक पूर्वपद निम्नलिखित 2 स्थानों पर प्रयुक्त हुआ है। यथा–

खैरया की ढाणी– बसवा

मंडी

इस पद का प्रयोग उस स्थान के लिए किया जाता है जहाँ थोक बिक्री होती है या जहाँ बहुत बड़ा बाजार लगता हो।''[33] दौसा क्षेत्र में मंडी बोधक परपद नम्नलिखित 5 स्थान–नामों पर प्रयुक्त हुआ है। जैसे–

अनाजमंडी– दौसा

घासमंडी– दौसा

कटला

इस शब्द के मूल में कटहरा या कटघरा शब्द कार्य कर रहा है। कटहरा या कटला एक प्रकार का छोटा और 'चौकोर बाजार' है। इसकी सुरक्षा के लिए दीवार के स्थान पर लकड़ी का कटघरा खडा कर दिया जाता था। बाद में इसी कटघरे ने पक्की पुख्ता चारदीवारी का रूप ले लिया।''[34] कालान्तर में और भी लोग अपने घर बनाकर रहना सुविधाप्रद समझने लगे। परिणाम यह हुआ कि कि जिसने बाजार बनवाया या जिसकी सीमा में बाजार था, उन्हीं के बाद कटला परपद जोड़कर स्थान–नाम निर्मित हो गये। जैसे–

गुढा कटला– बसवा

कॉलोनी

यह अंग्रेजी शब्द है जिसका अभिप्राय उस बस्ती से है जिसमें किसी संस्था में काम करने वाले या अन्य लोगों के लिए विषिष्ट उद्देषय से बनाये गये श्वनों के समूह से है।''[35] दौसा क्षेत्र में कॉलोनी परपद के रूप में प्रयुक्त हुई है। यथा–

नेहरू कॉलोनी– लालसोट

जलाषय बोधक परपद

ताल(तालढप्रा.तल्लढसं.तल्लः(झील)''[36]–

इसका सीधा अर्थ जलाषय है। आकृति के अनुसार यह वृत्त के रूप में गोल होता है या गोलाई लिए हुए। लम्बाई में काफी फैला और चौडाई में सीमित। ताल बोधक उत्तरपवद निम्नलिखित 1 स्थानों पर प्रयुक्त हुआ है। जैसे–

खरताल–दौसा

सर

इस पद का प्रयोग जलाषय या तालाब के लिए किया जाता है। जिस स्थान पर ये तालाब थे जब वहाँ पवित्रता एवं पुण्य अर्जन की दृष्टि के अतिरिक्त पानी आदि की सुविधा को शी ध्यान में रखकर मनुष्यों ने अपने घर बनाने प्रारम्भ किये तो निर्जन स्थान बस्ती में परिवर्तित हो गये। नये स्थानों के नामकरण की समस्या का निदान 'सर' को उत्तरपद बनाकर विविध विष्टितावाची पदों के बाद में जोडकर किया जाने लगा। यथा–

रामसर– रामगढ़, लालसोट

सरी

यह 'सर' का ही विकसित रूप है। सरी का अर्थ छोटा तालाब या जलाषय होता है। इस पद का प्रयोग परपद के रूप में 'सर' के समान ही ही किया जाता है। जैसे–

लोहसरी– दौसा

कुई

कुआँ संस्कृत 'कूप' का विकसित रूप है जिसका अर्थ प्राकृतिक जल के प्राप्त्यर्थ–खोद कर बनवाया जाने वाला विषेष गढ़ा होता है जिसमें ईंट की वृत्ताकार चुनाई कर स्थायी रूप देने का प्रयत्न किया जाता है। इसी का छोटा रूप 'कुइयाँ' या कुई है।''[37] दौसा क्षेत्र में कुई बोधक परपद 1 स्थान पर प्रयुक्त हुआ है। जैसे–

बांदीकुई– बसवा

वर, वरा, वरी

'वर' का प्रयोग संस्कृत और प्राकृत में केवल श्रेष्ठ या उत्तम के लिए ही नहीं अन्य अर्थों के लिए शी हुआ है। फारसी में यही पद 'वाला', 'वाले', 'वाली' आदि अर्थों में शी वयवह्यत होता है। इन दोनों के उच्चारण में थोड़ा अन्तर मिलता है। जहाँ तक इसके परपद रूप के प्रयोग का सम्बन्ध है यह फारसी के 'वर' का ही लोक–प्रचलित रूप जान पड़ता है और 'वाला' अर्थ को ग्रहण किये हुए है। इसी का दूसरा रूप 'वरा' है। यह शी 'वाला' वैषिष्ट्य को व्यक्त करता है।''[38] जैसे–

मण्डावर– महवा
मण्डावरी– लालसोट

शूमि वैषिष्ट्य बोधक परपद

शूमि–वैषिष्ट्यबोधक पदों में शूमि की विभिन्नता को प्रदर्षित करने वाले पदों का प्रयोग किया गया है। शूमि कहीं ऊँची, कहीं समतल एवं कहीं नीची होती है। किसी स्थान पर शूमि की मिट्टी अच्छी होती है, कहीं रेतीली एवं अनुपजाऊ होती है। ये समस्त भिन्नताएँ अपनी वषिष्ट्ता के कारण स्थान–नामों में परपद रूप में संयुक्त हो जाती हैं। पूर्वपद रूप में शूमि वैषिष्ट्य बोधक पद अल्पसंख्या में प्राप्त होते हैं। शूमिवैषिष्ट्य बोधक परपद निम्न हैं–

खालसा

यह पद अरबी 'खालिस' का विकसित रूप है जिसका प्रयोग राजा की निजी या जातीय शूमि के लिए किया जाता है। कालान्तर में ऐसी शूमि जब पुरस्कार या श्रण–पोषण के लिए राज्य की ओर से अपने शुभचिंतकों को प्रदान की जाने लगी तो व्यक्ति विषेष का एकाधिकार व्यक्त करने के लिए 'खालसा' का प्रयोग होने लगा। जब 'खालसा' पर नयी बस्तियाँ बसी तो उसे परपद का स्थान मिल गया और स्थान बोधक परपदों के रूप में प्रयुक्त होने लगा।''[39] जैसे–

डोब खालसा– रामगढ़

जागीर

यह फारसी शब्द है जिसका अभिप्राय अर्थ जायदाद या जमींदारी से है जो सरकार से किसी बड़े काम के बदले मिले।''[40] ऐसी जमीन के आस–पास जब बस्तियाँ बसने लगी तो यह परपद के रूप में प्रयुक्त होकर स्थान संरचना का आधार बना। जैसे–

डोब जागीर– रामगढ़

बुजुर्ग

जितने भी स्थान–नाम 'खुर्द' परपद से युक्त होते हैं–वे प्रायः सभी 'बुजुर्ग' परपद युक्त नये स्थान–नामों का समूह तैयार करते हैं। इस प्रकार भूमि वैषिष्ट्य सम्बन्धी परपद होते हुए 'बुजुर्ग' इन वैषिष्ट्य सम्बन्धी पदों के अन्तर्गत भी आ सकता है। जैसे–

बाडा बुजुर्ग– महवा
खेडला बुजुर्ग– महवा

कलाँ

यह फारसी पद है जो 'बड़े',लम्बे' या 'ज्येष्ठ' के लिए प्रयुक्त किया जाता है।''[41] इसका शी विकास दो विषम स्थानों के अन्तर को स्पष्ट करने के साधन के रूप में हुआ है और इसे परपद का स्थान प्राप्त हो गया। दौसा क्षेत्र में कलाँ बोधक परपद स्थानों पर प्रयुक्त हुआ है। जैसे–

खुरी कलाँ– दौसा
खेडली कलाँ– महवा

खुर्द

यह फारसी पद है जिसका अर्थ छोटा गाँव, पहलवी में खोर्दे तथा अवेस्ता में खोर्द जिसका अर्थ छोटा है।''[42] यह शूमि या क्षेत्र की लघुता बतलाने के कारण जब दो स्थानों की छोटाई, बड़ाई के अन्तर को स्पष्ट करने में सहायक हुआ तो परपद बन गया और स्थानवाची पूर्वपदों के पष्चात् जोड़ा जाने लगा।''[43] जैसे–

खुरी खुर्द– दौसा
खेडली खुर्द– महवा

हेड़ा

वृहत् स्तर पर शेज के आयोजन को हेड़ा कहा जाता था। इसी तरह छोटे स्तर पर शेज के आयोजन को हेड़ी कहा जाता था।''[44] लेकिन कालान्तर में इन स्थलों के आस–पास बस्तियाँ बसने लगीं तो हेड़ा, हेड़ी को परपद का दर्जा प्राप्त हो गया। जैसे–

आंतरहेडा– महवा
राजाहेडा– बसवा
पलानहेडा– महवा
बालाहेडी– महवा

टप्पा

यह पद दो स्थानों के बीच की विस्तृत शूमि के लिए प्रयुक्त होता है अथवा शूमि के छोटे शग के लिए। इसका प्रयोग गाँव, कस्बा, परगना की शँति शी होता रहा है।''[45] टप्पा परपद रूप में प्रयुक्त होकर स्थान संरचना का आधार रहा है। जैसे–

ढिगारिया टप्पा– बसवा
भोपुर टप्पा– महवा

थल, थला

संस्कृत के 'स्थल' का विकसित हिन्दी रूप थल है। सामान्यतः यह शब्द स्थान या जगह के लिए प्रयुक्त होता है,परन्तु रेतीली शूमि वाले क्षेत्र जैसे शूड़ के क्षेत्र अथवा रेगिस्तान शी 'थल' कहलाते हैं। प्रारम्भ में रेतीली शूमि वाले क्षेत्रों में बसने वाली बस्तियाँ 'थल' कहलाती थीं, धीरे–धीरे थल शब्द स्थान बोधक परपद रूप में अन्य स्थान–नामों में संयुक्त होने लगा। थल के थला जैसे क्षेत्रीय रूपान्तर शी हैं।''[46] जैसे–

रामथला– नांगल राजावतान

घाटी

दो पहाड़ों के बीच की नीची जमीन के अर्थ में घाटी पद का प्रयोग होता है।''[47] कालान्तर में ऐसे स्थानों पर बस्ती बस जाने के कारण घाटी परपद के रूप में प्रयुक्त किया जाने लगा। जैसे–

दीपपुरा घाटी– बसवा

सीमाबोधक परपद

पट्टी

संस्कृत 'पट्ट' का विकसित रूप 'पट्टा' है। पट्टा विषेषतः भू–सम्पत्ती का अधिकार पत्र है, जो आसामी या ठेकेदार को स्वामी की ओर से दिया जाता है। पट्टा का स्त्रीलिंग पट्टी है। दौसा जिले में पट्टी एक प्रकार की भू–सम्पत्ती का बोधक है जो निष्चित सीमा तक फैली हुई हो। एक ही स्वामी की अधिकृत विभिन्न का नाम पट्टी के साथ संयुक्त कर विभिन्नता प्रदर्षित की जाती है। दौसा जिले में पट्टी परपद युक्त स्थान–नाम निम्न हैं। जैसे–

गढी पट्टी– महवा
मोडा पट्टी– दौसा
हरपट्टी– लवाण

निष्कर्ष

निष्कर्षतः कहा जा सकता है कि परसंयुक्तपदों में प्राणिव्यंजक परपदों के बजाय अप्राणिव्यंजक परपद बहुतायत में पाये जाते हैं।

सन्दर्भ ग्रंथ सूची

1. *तुलसीदास, रामचरित मानस, बालकांड़, 231*
2. *विभू, विद्याभूषण, अभिधान– अनुशीलन, पृ. 2।*
3. *सोनी, रामगोपाल, महाराष्ट्रीय कुलाभिधानों का भाषावैज्ञानिक और सांस्कृतिक अनुषीलन, पृ.1–2।*
4. *अग्रवाल, वासुदेवषरण, पाणिनिकालीन भारतवर्ष, पृ. 37।*
5. *उपरिवत् पृ. 37–38।*
6. *प्रजापति, कमलेष कुमार, स्थानवाची नामों का समाजभाषा शास्त्रीय विष्लेषण, आष प्रकाषन, कानपुर,2012, पृ. 86।*
7. *गहलोत, जगदीषसिंह, कछवाहों का इतिहास, पृ.295।*
8. *कालिका प्रसाद(सं.), वृहत् हिन्दी कोष, ज्ञानमंडल लिमिटेड, वाराणसी,1984, पृ..1213।*
9. *मीणा, जयपाल, राजस्थान का मीणा जातिय लोक साहित्य, पृ 12।*
10. *व्यास, प्रकाष, राजस्थान का सामाजिक इतिहास, पृ. 78।*
11. *पाल, केषवराम, हिन्दी में प्रयुक्त संस्कृत शब्दों में अर्थ–परिवर्तन, पृ0 366।*
12. *व्यास, कैलाषनाथ, गहलोत, देवेन्द्रसिंह (सं.), राजस्थान की जातियों का सामाजिक व आर्थिक जीवन, पृ.253।*
13. *सारस्वत, रावत, मीणा इतिहास, झूथालाल नाढला, प्रकाषक, जयपुर, सं. 2025, पृ. 27।*
14. *गहलोत, जगदीषसिंह, राजपूताने का इतिहास– अलवर राज्य, पृ. 224।*
15. *पाइलेट मेजर, अलवर गजेटियर,,पृ. 38।*
16. *गहलोत, जगदीषसिंह, राजपूताने का इतिहास– अलवर राज्य, पृ. 225।*
17. *कर्निंघम, आर्क्योलोजीकल सर्वे ऑफ इण्डिया, जि. 20, पृ. 11–14–15(1882–83)*
18. *जोषी, पिनाकीलाल, अलवर राज्य का इतिहास, पृ. 17*
19. *व्यास, प्रकाष, राजस्थान का सामाजिक इतिहास, पृ. 72।*
20. *लघु हिन्दी शब्द सागर , नागरी प्रचारिधी सभा,काषी ,पृ.89।*
21. *अग्रवाल, सरयू प्रसाद ,अवध के स्थान–नामों का शषा वैज्ञानिक अध्ययन, पृ.144।*
22. *चौधरी,ऊषा ,मुरादाबाद जिले के स्थान–नामों का भाषा वैज्ञानिक अध्ययन,पृ.151।*
23. *अग्रवाल,वासुदेवशरण,पाणिनिकालीन शरतवर्ष,पृ.77।*
24. *यथावत्,पृ.153।*
25. *उपरिवत्, पृ.77।*
26. *कालिका प्रसाद(सं.), वृहत् हिन्दी कोष, पृ.578।*
27. *चौधरी,ऊषा, मुरादाबाद जिले के स्थान–नामों का शषा वैज्ञानिक अध्ययन,पृ.124–125 ।*
28. *चौधरी, ऊषा ,मुरादाबाद जिले के स्थान–नामों का भाषा वैज्ञानिक अध्ययन, पृ.148–149।*
29. *चौधरी,ऊषा ,मुरादाबाद जिले के स्थान–नामों का भाषा वैज्ञानिक अध्ययन, पृ.150।*
30. *कालिका प्रसाद(सं.), वृहत् हिन्दी कोष,पृ. 206।*
31. *चौधरी, ऊषा, मुरादाबाद जिले के स्थान–नामों का भाषा वैज्ञानिक अध्ययन, पृ.143।*
32. *गहलोत, जगदीषसिंह ,कछवाहों का इतिहास,पृ.359।*
33. *अग्रवाल,वासुदेव शरण ,पाणिनिकालीन शरतवर्ष ,पृ. 78।*
34. *वर्मा ,हरिषचन्द्र(सं.),मध्यकालीन शरत,भाग 2,पृ.836।*
35. *कौषिक, जयनारायण, दिल्ली की अपनी कहानी, पृ. 265।*
36. *कालिका प्रसाद(सं.), वृहत् हिन्दी कोष, पृ.245।*
37. *पाण्डेय,ब्रजमोहन नालिन ,व्युत्पत्ति विज्ञान सिद्धान्त और विनियोग ,प,पृ.206।*
38. *अग्रवाल ,सरयू प्रसाद,अवध के स्थान–नामों का भाषा वैज्ञानिक अध्ययन,पृ.182।*
39. *अग्रवाल,सरयू प्रसाद ,अवध के स्थान–नामों का भाषा वैज्ञानिक अध्ययन,पृ.242।*
40. *अग्रवाल,सरयू प्रसाद,अवध के स्थान–नामों का शषा वैज्ञानिक अध्ययन,पृ.236।*
41. *गुप्त, महेष चन्द्र,हिन्दी सदियों से राजकाज में, पृ.1।*

42. *मद्दाह ,मुहम्मद मुस्तफा खाँ (सं. क.),उर्दू हिन्दी शब्दकोष, पृ.106।*
43. *सोनी ,रामगोपाल, महाराष्ट्रीय कुलाभिधानों का भाषावैज्ञानिक और सांस्कृतिक अनुषीलन,पृ.266।*
44. *अग्रवाल, सरयू प्रसाद ,अवध के स्थान–नामों का भाषा वैज्ञानिक अध्ययन,पृ.239।*
45. *शास्त्री, कलानाथ द्वारा लिखित सं. लेख, राजस्थान पत्रिका,जयपुर संस्करण, 18 नवंबर,2009,पृ.5।*
46. *अग्रवाल,सरयू प्रसाद,अवध के स्थान–नामों का भाषा वैज्ञानिक अध्ययन,पृ.190।*
47. *नवलजी(सं.), नालन्दा विषाल शब्द सागर, पृ.345।*
48. *नवलजी(सं.),नालन्दा विषाल शब्द सागर,पृ.345।*